International Journal of Applied Research 2015; 1(6): 297-298

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 3.4
IJAR 2015; 1(6): 297-298
www.allresearchjournal.com
Received: 03-04-2015
Accepted: 02-05-2015

डॉ0 शिवदत्त शर्मा
अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय ढलियारा कांगड़ा हिमाचल प्रदेश ।

ज्योति शर्मा
हिंदी प्राध्यापक स्वामी विवेकानन्द महाविदयालय चिंतपूर्णी हिप्र

Correspondence:
डॉ0 शिवदत्त शर्मा
अध्यक्ष हिन्दी विभाग राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय ढलियारा कांगड़ा हिमाचल प्रदेश ।

संत रविदास वाणी का नैतिक दर्शन

डॉ0 शिवदत्त शर्मा, ज्योति शर्मा

धर्म मानवता का आधार है। भारतीय दर्शन की महान परम्परा में धार्मिक दर्शन में वे सभी तत्व सम्मिलित हैं, जिन पर मानवता टिकी हुई है। धर्म शब्द धृ धातु से बनाा है, जिसका अर्थ है धारण करना अर्थात् सद्गुणों को धारण करना।
महर्षि कणाद् ने धर्म की व्याख्या करते हुए वर्णन किया है कि जिसके द्वारा लोक और परलोक दोनों ही लोकों में सुख मिले, वही धर्म है।[1]
मनु ने मनुस्मृति में दशम् अध्याय में धर्म के अनेक लक्षण बताते हुए कहा है कि जिस व्यक्ति में धैर्य, क्षमा, विषयों से विरक्ति, स्वच्छता, सत्यवादिता, अक्रोध, संतोष जैसे गुण पाए जाते हैं, उसे धार्मिक कहा जाता है।[2]
संत रविदास ने`भी मानवता के कल्याण हेतु मनुष्य के लिए धर्म को धारण करना अनिवार्य बताया है, तथा धर्म के मार्ग पर चलने की सलाह दी है। संत रविदास ने धर्म के संकुचित अर्थ को ग्रहण न करते हुए उसकी व्याख्या करते हुए कहा है कि जो धर्म मानवता को जीवित रखने में सहायक हो, वही धर्म है।
धर्म की व्याख्या करते हुए उन्होनें मनुष्य को धर्म के मार्ग अर्थात् सत्कर्म करने की सलाह दी है, उनका कथन है कि जो व्यक्ति जीवन में सन्मार्ग पर अग्रसर नहीं होते, सत्कर्म नहीं करते, अनैतिकता में जीवन जीते हैं, उन्हें अन्ततः पछताना पड़ता है।

कंपी देह काया गढ हीना, फिरि लागा पछितांण बे। 3
जन रविदास कहै वणिजारिया, तेरे ढिलरै परै पिरांन वे।।
नांव न लीया औगुन कीया, इस जोबन कै ताण बे।
अपनी पराई गिनि न काई, मंदे करम कमांण बे।।

संत रविदास ने उपदेश दिया है कि मनुष्य को सत्कर्म और दुष्कर्म में अन्तर समझना चाहिए, तथा धार्मिक ग्रन्थों का अनुशीलन करना चाहिए, जिससे धार्मिक वातावरण का संचार हो।

करम अकरम बीचारीऐ, संका सुनि बेद पुरान।[4]

धार्मिक दर्शन के अंतर्गत उन्होनें मनुष्य को माया से बचकर रहने का उपदेश दिया है। संसार माया–वैष्टित है। जो व्यक्ति कमल–पत्रवत् इस संसार में व्यवहार करता है उसे माया अपने जाल में नहीं घेर पाती, माया संसार में इससे बचना नितांत कठिन है।
जग महं रहहु कंवल जल जइसे, गुरचरनां चित रहिए।[5]
दया को धर्म का मूल माना जाता है। क्षमा अथवा दया करना धर्म क अनिवार्य योग्यता है। काम–क्रोध को त्याग कर जीवों पर दया का भाव दिखाना धर्म का गुण है।[6]

आड़म्बरों का त्याग

संत रविदास के धार्मिक दर्शन में आड़म्बरों को स्थान नहीं है। उनका मानना था कि आड़म्बर व्यक्ति को सही रास्ते पर आने से श्टकाते हैं। आड़म्बरो बाहयाचारों से आवृत भक्ति भक्ति नहीं होती, वह तो सहज अवस्था में ही हो सकती है। आड़म्बर तो मात्र प्रदर्शन मात्र है, उनका एक पद देखिएः–

भगती अैसी सुनहु रे भाई! आई भगति तउ गई बड़ाई।
कहा भयो नाचैं अरु गायैं, कहा भयौ तप कीन्हैं।
कहा भयौ जै चरन पषालें, जौ लौं परम तत नहीं चीन्हैं।।

कहा भयौ जे मूंड मुंडायौ, बहु तीरथ ब्रत कीन्हैं।
स्वामी दास भगत अरु सेवग, जौ परम तत नहीं चीन्हैं।।[7]

प्रभु की भक्ति आड़म्बर नहीं अहं का परित्याग चाहती है,[8] तभी परमपद को प्राप्त किया जा सकता है।

संतों की वाणी नैतिकता का संदर्भ ग्रंथ मानी जाती है, क्योंकि अनैतिकता का ही दर्द संतों की वाणी का मुख्य आधार माना जा सकता है। संत रविदास, कबीर कालीन समाज का नैतिक पतन इतिहास में स्वयं प्रमाण है, यही कारण है कि संतों ने पुनः एक बार मानव–मूल्यों को स्थापित करने का भगीरथ प्रयास किया, यह प्रयास भक्ति के क्षेत्र में हो अथवा कर्म एवं वाणी के क्षेत्र में। संतों ने सतत् प्रयासों से मानव जाति के कल्याण हेतु समाज में एक बार पुनः मानव मूल्यों को स्थापित करने का प्रयास किया, जिसमें अत्याधिक सफलता भी उन्हें मिली।

संत रविदास वाणी में नैतिक मूल्यों का प्रायः हर एक पद में उल्लेख मिलता है। उन्होनें जिन मूल्यों को अपने नैतिक दर्शन में अधिक महत्व दिया, वे इस प्रकार हैं:–

क) सत्य – भाषणः– संत रविदास के पदों में सत्य को ईश्वर के तुल्य माना गया है तथा प्रत्येक व्यक्ति को सत्य–भाषण का उपदेश दिया है। उन्होनें असत्य भाषण को पाप के समतुल्य माना है। उनकी दृष्टि में सत्य की शक्ति अप्रतिहत है, अन्ततः सत्य की ही जीत होती है। और असत्य क्षणिक लाभ देकर पुनः वास्तविकता को नहीं छुपा सकता, जैसे सूर्य के प्रकाश को बादल थोड़ी देर तक ही रोक सकते हैं, परन्तु दीर्घ काल तक नहीं।

सत ईष कहुं रुप है, सत शक्ति अन्त अपार।
रविदास सत कं धारणा, देहहिं पाप निवार।।[9]

ख) संयमः– संत रविदास पर अन्य संतों की तरह नाथों, सिद्धों का भी थोड़ा बहुत प्रभाव परोक्ष रुप से पड़ा हुआ देखा जा सकता है। संयम रहकर इन्द्रियों का निग्रह करते हुए ही कमल–पत्रवत् इस संसार में व्यवहार करने की सलाह संत रविदास वाणी में अनेक पदों में मिलती है।

उनका एक पद देखिएः–

जन ' रविदास ' राम नित भेटहिं, रहि संजम जागति पहरा रें।[10]

संयम द्वारा मनुष्य अनैतिक कार्य करने से रुकता है तथा अच्छे कार्यों की ओर प्रवृत होता है। भारतीय दर्शन में भी संयम एवं इन्द्रिय निग्रह का परामर्श दिया गया है। श्रीमद् भगवत् गीता में संयम का विषद् वर्णन मिलता है।

ग) सेवाः– भारतीय दार्शनिक परम्परा में नैतिक गुणों के तीन स्तम्भ माने जाते हैं सत्य, संयम और सेवा। संत रविदास जी ने भी अपनी वाणी में मानव जाति की सेवा हेतु उपदेश दिया है।

घ) पंचविकार त्यागः– संतों का सम्पूर्ण दर्शन काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार को मनुष्य का शत्रु मानता है। भारतीय दर्शन में पंच दोष विकार के परित्याग का बड़ा विस्तृत वर्णन मिलता है। श्रीमद् भगवत् गीता में अनेक स्थलों पर इनके परित्याग की चर्चा है। अद्वैत वेदान्त में भी इसी तरह का उल्लेख मिलता है। अद्वैत वेदान्त के एक श्लोक का अक्षरशः अनुवाद संत रविदास वाणी में मिलता है, जिसमें उल्लेख है कि मृग, मीन, हाथी, पतंग और भ्रमर उपरोक्त केवल एक दोष के कारण नष्ट हो जाते हैं, परन्तु मनुष्य में एक ही जगह पाँचों विकार होने से उसका बच पाना नितान्त कठिन है, केवल संयम और प्रभु शक्ति ही उसे बचा सकते हैं। संत रविदास का यह पद देखिएः–

म्रिग मीन भ्रिंग पतंग कुंजर, एक दोष विनास।
पंच दोष असाध जा महिं, ताकी केतक आस।।[11]

इसी तरह एक और पंक्ति में भी इन पाँच विकारों द्वारा जीवन को नष्ट करने का उल्लेख हैः–

काम क्रोध माइया मद म

परनिन्दा

परनिन्दा भारतीय दर्शन में पाप तुल्य मानी जाती है। महाभारत जैसे नैतिक ग्रंथ में परनिन्दा को महापापी की श्रेणी में गिना गया है।[13]

संत रविदास वाणी में परनिन्दक को नरक वासी होने की सजा का उल्लेख है। समाज में पिशुन एवं परनिन्दक की भर्त्सना करते हुए इस बुराई से बचने का उपदेश दिया गया है। संत रविदास वाणी में सत्य ही कहा गया है क्योंकि परनिन्दक कभी भी किसी के स्नेह का भाजन नहीं बन सकता और वह स्वयं भी सदैव चिन्तातुर रहने के कारण सुख का आनंद नहीं ले सकता। अतः इस धरती पर ही वह नरक के सदृश दुःख का उपभोग करता रहता है। समाज में उसका कोई स्थान नहीं होता, अतः परनिन्दा का त्याग करना चाहिएः–

साध का निन्दुक कैसे तिरे, सिर पर जानहु नरक ही परै।[14]

परनिन्दा के समान तो दूसरा पाप नहीं हैः–

परनिन्दा सम नहीं अधमाई, कहि रविदास मुनि सब गाई।[15]

व्यसनों का परित्याग

संत रविदास वाणी में व्यसनों के प्रति व्यक्ति को सचेत रहने की सलाह दी गई है। व्यसनों से व्यक्ति का मन, बुद्धि एवं व्यवहार सब कुछ कुप्रभावित होता है। उनका मानना था कि सुरा पवित्र गंगाजल में पडने पर उसे दूषित कर देता है, कोई भी सद्बुद्धि वाला व्यक्ति उसे अपवित्र समझकर ग्रहण नहीं करता।

सुरसरी सलल कृत वारुणी रे, संत जन करत नहीं पान।[16]

अतः व्यक्ति को पंच विकारों के साथ–साथ व्यसनों से भी दूर रहना चाहिए।

सदर्भ सूचि

1. यतो भ्यु दानि श्रेयः सिद्धिः सः धर्मः – कणाद् दर्शन
2. मनुस्मृति अध्याय – 10
3. र. वा. पद – 31
4. र. वा. पद – 30
5. र. वा. पद – 165
6. र. वा. पद – 126
7. र. वा. पद – 18, 27
8. र वा पद 27
9. रविदास दर्शन 23
10. र वा पद 145
11. र वा पद 147
12. र वा पद 14
13. महाभारत शान्ति पर्व
14. र वा पद 130
15. ग्यान गोष्ठी रमैणी 83
16. र वा पद 51